अष्टादश खण्ड

ठाकुर श्रीरामकृष्ण कलकत्ता नगरी में
भक्त-मन्दिर में

प्रथम परिच्छेद

(बलराम-मन्दिर में श्रीरामकृष्ण)

श्रीरामकृष्ण भक्तों के संग बलराम की बैठक में बैठे हुए हैं— सहास्यवदन। अब समय प्राय: तीन का है। विनोद, राखाल, मास्टर इत्यादि पास बैठे हैं। छोटे नरेन आ उपस्थित हुए।

आज है मंगलवार, 28 जुलाई, 1885 ईसवी; आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा। ठाकुर बलराम के घर में सुबह आए हैं और भक्तों के संग आहार आदि किया है। बलराम के घर पर श्री श्री जगन्नाथदेव की सेवा है। इसीलिए, ठाकुर कहते हैं, ''बड़ा शुद्ध अन्न है''।

नारायण आदि भक्तों ने बताया था, नन्दबसु के घर में अनेक ईश्वरीय छवियाँ हैं। आज ठाकुर उन्हें ही देखने उनके घर जाकर अपराह्न में छवियाँ देखेंगे। एक भक्त ब्राह्मणी का घर नन्दबसु के घर के निकट है, वहाँ पर भी जाएँगे। कन्या-शोक में सन्तप्ता ब्राह्मणी प्राय: दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए जाती हैं। उन्होंने अतिशय व्याकुल होकर ठाकुर को आमन्त्रित किया है। उनके घर जाना होगा तथा और भी एक स्त्री भक्त की माँ के घर भी जाना है।

ठाकुर बलराम के घर आकर छोकरा भक्तों को भक्तों द्वारा बुला भेजते हैं। छोटे नरेन ने कभी कहा था, 'मुझे काम है, इस कारण मैं सर्वदा नहीं आ सकता। परीक्षा के लिए पढ़ना है' इत्यादि। छोटे नरेन के आ

जाने पर ठाकुर उसके साथ बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(छोटे नरेन से)*— तुझे बुलाने के लिए नहीं भेजा।

छोटे नरेन *(हँसते-हँसते)*— तो फिर क्या हो गया?

श्रीरामकृष्ण— फिर तुम्हारा नुकसान होगा, अवसर मिलने पर आना।

ठाकुर ने जैसे रूठकर (अभिमान से) यह बात कही।

पालकी आ गई है। ठाकुर श्रीयुक्त नन्दबसु के घर जाएँगे।

ईश्वर का नाम करते-करते ठाकुर पालकी में बैठ गए। पैरों में काला वार्निष्ड चटि जूता (स्लीपर), लाल फीतापाड़ धोती; उत्तरीय (चादर) नहीं। जूते के जोड़े को मणि ने पालकी के एक किनारे पर रख दिया। पालकी के संग-संग मास्टर जा रहे हैं। क्रमश: परेश आकर मिल गए।

नन्दबसु के गेट के भीतर पालकी ने प्रवेश किया। क्रमश: घर के सामने वाली प्रशस्त भूमि पर से होकर पालकी घर में आ उपस्थित हुई।

गृहस्वामी के रिश्तेदार ने आकर ठाकुर को प्रणाम किया। ठाकुर ने मास्टर से चटि जूता देने के लिए कहा। पालकी से उतर कर ऊपर के हॉल कमरे में आए। बहुत बड़ा और खुला हॉल कमरा है। देव-देवियों की छवियाँ चारों ओर हैं।

मालिक और उसके भाई पशुपति ने ठाकुर के साथ बातें कीं। क्रमश: पालकी के पीछे-पीछे आकर भक्तगण इसी हॉल कमरे में इकट्ठे हुए। गिरीश के भाई अतुल आए हैं। प्रसन्न के पिता श्रीयुक्त नन्द के घर में सर्वदा आना-जाना करते हैं। वे भी उपस्थित हैं।

द्वितीय परिच्छेद

(श्रीयुक्त नन्दबसु के घर में शुभागमन)

ठाकुर श्रीरामकृष्ण अब छवियाँ देखने के लिए उठे। संग में मास्टर तथा और भी कई भक्त हैं। गृहस्वामी के भाई श्रीयुक्त पशुपति भी संग-संग रहकर छवियाँ दिखला रहे हैं।

ठाकुर पहले तो चतुर्भुज विष्णु-मूर्ति-दर्शन कर रहे हैं। देखते ही भाव में विभोर हो गए। खड़े हुए थे, बैठ गए। कुछ समय भाव में आविष्ट हुए रहे।

द्वितीय छवि— श्रीरामचन्द्र की भक्तवत्सल मूर्त्ति।

श्रीराम हनुमान के मस्तक पर हाथ लगाकर आशीर्वाद कर रहे हैं। हनुमान की दृष्टि है श्रीराम के पादपद्मों में। ठाकुर श्रीरामकृष्ण अनेक क्षण तक इसी छवि को देखते हैं। भाव में कहते हैं, ''आहा! आहा!''

तृतीय छवि— वंशीवदन श्रीकृष्ण कदमतले खड़े हैं।

चतुर्थ— वामनावतार। छाता सिर पर, बलि के यज्ञ में जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, ''वामन''! एवं एक दृष्टि से देख रहे हैं।

अब नृसिंहमूर्त्ति-दर्शन करके ठाकुर गोष्ठ (चरागाह) की छवि-दर्शन कर रहे हैं। श्रीकृष्ण राखालों (चरवाहों, गोपों) के साथ वत्सगण (बछड़े) चरा रहे हैं। श्री वृन्दावन और यमुना-पुलिन!

मणि बोल उठे— बहुत सुन्दर छवि है!

सप्तम छवि देखकर ठाकुर कह रहे हैं—
'धूमावती'। *अष्टम*— षोडशी, *नवम*— भुवनेश्वरी, *दशम*— तारा, *एकादश*— काली। इन सब मूर्त्तियों को देखकर कह रहे हैं— 'ये सब उग्र मूर्त्तियाँ हैं! ये मूर्तियाँ घर में नहीं रखते। ऐसी मूर्त्ति घर में रखने पर पूजा देनी चाहिए। किन्तु आप लोगों के भाग्य (अदृष्ट) का जोर है, आप रखे हुए हैं।''

श्री श्रीअन्नपूर्णा-दर्शन करके ठाकुर भाव में कह रहे हैं, 'बा! बा!'

तदुपरान्त राइ राजा (राधा राजा के वेश में)। निकुञ्जवन में सखियों से घिरी हुईं सिंहासन पर बैठी हुई हैं। श्रीकृष्ण कुञ्ज के द्वार पर कोतवाल सजे बैठे हुए हैं। फिर हिण्डोले की छवि (दोलकी)। ठाकुर अनेक क्षणों तक इसके बाद की छवि देखते रहे। ग्लासकेस के भीतर वीणापाणि की मूर्त्ति; देवी— वीणा हाथ में, मतवाली होकर राग-रागणी आलाप कर रही हैं।

छवि देखना समाप्त हो गया। ठाकुर फिर दोबारा गृहस्वामी के निकट आ गए। खड़े-खड़े ही गृहस्वामी से कह रहे हैं—

''आज खूब आनन्द हुआ। वाह! आप तो खूब बड़े हिन्दू हैं। अंग्रेज़ी छवियाँ न रखकर जो ये छवियाँ रखी हैं— बड़ा आश्चर्य!''

श्रीयुक्त नन्दबसु बैठे हुए हैं। वे ठाकुर को आह्वान करके कह रहे हैं, ''बैठिए! खड़े हुए क्यों हैं?''

श्रीरामकृष्ण *(बैठकर)*— ये पट खूब बड़े-बड़े हैं। तुम अच्छे हिन्दू हो।

नन्दवसु— अंग्रेज़ी छवि भी है।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— वे सब ऐसी नहीं हैं। अंग्रेज़ी की ओर तुम्हारी वैसी नजर नहीं है।

कमरे की दीवार के ऊपर श्रीयुक्त केशवसेन के नवविधान की छवि टँगी हुई थी। श्रीयुक्त सुरेश मित्र ने उस छवि को बनवाया था! वे ठाकुर के एक प्रिय भक्त हैं। उस छवि में परमहंस केशव को दिखला रहे हैं— भिन्न-भिन्न पथों द्वारा सब धर्म-अवलम्बीगण ईश्वर की ओर जा रहे हैं, केवल पथ अलग हैं।

श्रीरामकृष्ण— ओ, यह तो सुरेन्द्र का है!

प्रसन्न के पिता *(सहास्य)*— आप भी उसके भीतर हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— वह तो एक तरह की है, उसके भीतर सब कुछ है।— इदानीम् भाव (अब का भाव)!

यह बात बोलते-बोलते हठात् ठाकुर भाव-विभोर हो रहे हैं। ठाकुर जगन्माता के संग बात कर रहे हैं।

कुछ देर बाद मतवाले की न्यायीं कह रहे हैं—
''मैं बेहोश नहीं हुआ।'' (*मकान की ओर दृष्टि करके कह रहे हैं,*) ''बड़ो बाड़ी। एते कि आछे? ईंट, काठ, माटि!'' (बड़ा घर! इसमें क्या है?— ईंट, काठ, मिट्टी!)

थोड़ी-सी देर बाद कहते हैं,
''सब ईश्वरीय मूर्त्तियाँ देखकर बड़ा आनन्द हुआ।''

और फिर कह रहे हैं,
''उग्रमूर्त्ति, काली, तारा (शव-शिवा मध्ये श्मशानवासिनी) रखना अच्छा नहीं, रखने पर पूजा देनी चाहिए।''

पशुपति *(सहास्य)*— वह वे जितने दिन चलाएँगे, उतने दिन ही चलेगा।

श्रीरामकृष्ण— वह तो है ही, किन्तु ईश्वर में मन रखना अच्छा है। उनको भूलकर रहना ठीक नहीं।

नन्दवसु— उनमें मति ही कहाँ होती है?

श्रीरामकृष्ण— उनकी कृपा होने पर होती है।

नन्दवसु— उनकी कृपा कहाँ होती है? उनमें क्या कृपा करने की शक्ति है?

(ईश्वर कर्त्ता— या कर्म ही ईश्वर)

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— समझता हूँ, तुम्हारा पण्डितों वाला मत है— जो जैसा कर्म करेगा वैसा फल पाएगा। इसे छोड़ दो! ईश्वर के शरणागत हो जाने पर कर्मक्षय हो जाता है। मैंने माँ के निकट फूल हाथ में लेकर कहा था— 'माँ! यह लो अपना पाप, यह लो अपना पुण्य; मैं कुछ भी नहीं माँगता, तुम मुझे शुद्धाभक्ति दो। यह लो अपना भला, यह लो अपना मन्दा; मुझे भला-मन्दा कुछ भी नहीं चाहिए, मुझे शुद्धाभक्ति दो। यह लो अपना धर्म, यह लो अपना अधर्म; मैं धर्म-अधर्म कुछ भी नहीं चाहता, मुझे शुद्धाभक्ति दो। यह लो अपना ज्ञान, यह लो अपना अज्ञान; मैं ज्ञान-अज्ञान कुछ भी नहीं चाहता, मुझे शुद्धाभक्ति दो। यह लो अपनी शुचि, यह लो अपनी अशुचि; मुझे शुद्धाभक्ति दो।'

नन्दबसु— कानून को वे बदल सकते हैं ?

श्रीरामकृष्ण— यह क्या! वे ईश्वर हैं, वे सब कर सकते हैं। जिन्होंने कानून बनाया है, वे कानून बदल सकते हैं।

(चैतन्यलाभ भोग के अन्त होने पर— या उनकी कृपा से)

''किन्तु वैसी बात तुम कह सकते हो। क्योंकि तुम्हारी भोग करने की इच्छा है, जभी तुम ऐसी बात कहते हो। एक मत तो है कि भोग की शान्ति बिना हुए चैतन्य नहीं होता! किन्तु भोग ही फिर क्या करेगा ? कामिनी-काञ्चन का सुख तो अभी है, अभी नहीं, क्षणिक! कामिनी-काञ्चन के भीतर क्या है ?— खटास, गुठली और छिलका— खाने पर अम्लशूल (पेट दर्द) होता है। 'संदेश' ज्योंहि निगल लिया, फिर नहीं!''

(ईश्वर क्या पक्षपाती ? अविद्या क्यों ?— उनकी खुशी)

नन्दबसु थोड़ा चुप रहे, उसके पश्चात् कहते हैं—

''वैसा कहते तो हैं ! ईश्वर क्या पक्षपाती हैं ? उनकी कृपा से यदि हो जाता है, तो फिर कहना पड़ेगा ही कि ईश्वर पक्षपाती हैं !''

श्रीरामकृष्ण— वे निज ही सब हैं, ईश्वर निज ही जीव, जगत सब हुए हैं। जब पूर्ण ज्ञान होगा, तब वही बोध होगा। वे मन, बुद्धि, देह, चौबीस तत्त्व— सब हुए हैं। वे फिर पक्षपात किसके ऊपर करेंगे ?

नन्दबसु— वे नाना रूप क्यों हुए हैं ?— कहीं पर ज्ञान, कहीं पर अज्ञान ?

श्रीरामकृष्ण— उनकी खुशी।

अतुल— केदारबाबु (चटर्जी) ने सुन्दर कहा है। किसी ने पूछा था, ईश्वर ने सृष्टि क्यों की ? उस पर कहा था कि जिस मीटिंग में उन्होंने सृष्टि का प्लान किया था, उस मीटिंग में मैं नहीं था। *(सबका हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण— उनकी खुशी।

यह कहकर ठाकुर गाना गाते हैं—

सकलि तोमार इच्छा इच्छामयी तारा तुमि।
तोमार कर्म तुमि करो मा लोके बोले करि आमि।
पंके बद्ध करो करी, पंगुरे लंघाओ गिरि,
कारे दाओ मा! ब्रह्मपद, कारे करो अधोगामी॥
आमि यन्त्र तुमि यन्त्री, आमि घर तुमि घरणी।
आमि रथ तुमि रथी, जेमन चालाओ तेमनि चलि॥

[भावार्थ— सब तुम्हारी इच्छा है। हे माँ तारा, तुम इच्छामयी हो। अपना कर्म तुम कर रही हो, जगत में सब कहते हैं, मैं कर रहा हूँ। पंक में, कीचड़ में, तुम हाथी को बद्ध कर देती हो और पंगु को गिरि लंघा देती हो। किसी को माँ, तुम ब्रह्म-पद दे देती हो और किसी को अधोगामी बना देती हो। मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; मैं घर हूँ, तुम घरणी हो। मैं रथ हूँ, तुम रथी हो— जैसे चलाती हो, वैसे ही चलता हूँ।]

''वे आनन्दमयी हैं! सृष्टि-स्थिति-प्रलय की लीला करती हैं। असंख्य जीव हैं, उसमें से कोई दो-एक ही मुक्त होते हैं। उसमें ही उन्हें आनन्द है। लाखों पतंगों में से दो-एक को काट कर, हँस कर तुम हाथ से ताली बजाती हो। कोई संसार में बद्ध हो रहा है, कोई मुक्त हो रहा है।

''भवसिन्धु माझे मन उठछे डुबछे कतो तरी।''
[भवसागर में मन रूपी कितनी नौकाएँ तैरती और डूबती हैं।]

नन्दबसु— उनकी तो खुशी है! हम जो मर रहे हैं!

श्रीरामकृष्ण— तुम कहाँ पर हो? वे ही सब बनी हुई हैं। जब तक उनको जान नहीं लेते तब तक 'मैं', 'मैं' करते हो!

''सब उनको जान पाएँगे, सब ही उद्धार पाएँगे। किन्तु कोई सुबह-सुबह खाना पा जाता है, कोई दोपहर के समय, और फिर कोई सन्ध्या के समय; किन्तु कोई भूखा नहीं रहेगा! सब ही अपने स्वरूप को जान पाएँगे।''

पशुपति— जी हाँ, वे ही सब हुए हुए हैं— बोध होता है।

श्रीरामकृष्ण— 'मैं' क्या हूँ, इसे खोजो तो ज़रा। मैं क्या हाड़-माँस या रक्त, या अंतड़ियाँ हूँ? 'मैं' को खोजते-खोजते 'तुम' आ पड़ता है, अर्थात् ? अन्तर में उसी ईश्वर की शक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। 'मैं' नहीं— 'वे'।

तुम्हें अभिमान नहीं! इतना ऐश्वर्य! 'मैं' एकदम त्याग नहीं होता; किन्तु यदि जाएगा नहीं तो फिर रहे साला ईश्वर का दास होकर *(सबका हास्य)*। ईश्वर का भक्त, ईश्वर का बेटा, ईश्वर का दास— यह अभिमान अच्छा है। जो 'मैं' कामिनी-काञ्चन में आसक्त हो जाता है, वह 'मैं' कच्चा मैं है, वह 'मैं' त्याग करना चाहिए।

अहंकार की ऐसी व्याख्या सुनकर गृहस्वामी तथा अन्य सभी ने अत्यन्त प्रीति-लाभ किया।

(ऐश्वर्य का अहंकार और मस्ती)

श्रीरामकृष्ण— ज्ञान के दो लक्षण हैं— प्रथम, अभिमान नहीं रहेगा। दूसरा शान्त स्वभाव। तुम्हारे दोनों लक्षण ही हैं। अतएव तुम्हारे ऊपर ईश्वर का अनुग्रह है।

''अधिक ऐश्वर्य होने पर, ईश्वर को भूल जाता है। ऐश्वर्य का स्वभाव ही यही है। यदुमल्लिक का अधिक ऐश्वर्य हुआ है, वह आजकल ईश्वरीय बात नहीं करता। पहले-पहले तो ईश्वर की बहुत सुन्दर बातें किया करता था।

''कामिनी-काञ्चन एक प्रकार का मद है। बहुत मद पी लेने पर चाचा-ताऊ-बोध नहीं रहता। उनसे ही कह देता है, तेरे वंश का...। मतवाले को बड़ा-छोटा-बोध रहता नहीं।''

नन्दबसु— वह तो है।

(Theosophy— क्षणिक योग से मुक्ति— शुद्धाभक्ति-साधन)

पशुपति— महाशय! ये सब क्या सत्य हैं— spiritualism, theosophy (आध्यात्मवाद, ब्रह्मवाद)? सूर्यलोक, चन्द्रलोक, नक्षत्रलोक?

श्रीरामकृष्ण— भाई, मैं तो नहीं जानता! इतना हिसाब क्यों? आम खाओ। कितने आम्रवृक्ष, कितनी लाख डालें, कितने करोड़ पत्ते— यह हिसाब करने

का मुझे क्या प्रयोजन? मैं बाग में आम खाने आया हूँ, खा के जाऊँ।

"चैतन्य यदि एक बार हो जाए, यदि एक बार ईश्वर को कोई जान सके तो फिर वे सब बेकार (व्यर्थ के) विषय जानने की इच्छा नहीं होती। विकार (पागलपन) रहने पर कितना क्या बोलता है— 'मैं पाँच सेर चावलों का भात खाऊँगा रे', 'मैं एक मटका जल पिऊँगा रे'। वैद्य कहता है, 'खाएगा? अच्छा, खाइयो!'— यह कहकर वैद्य तम्बाकू पीता है। विकार हट जाने पर जो कहेगा वही सुनना होगा।"

पशुपति— हमारा विकार चिरकाल रहेगा शायद?

श्रीरामकृष्ण— क्यों! ईश्वर में मन रखो, चैतन्य होगा।

पशुपति *(सहास्य)*— हमारा ईश्वर का योग क्षणिक है— तम्बाकू पीने में जितनी देर लगती है। *(सबका हास्य)*।

श्रीरामकृष्ण— वह चाहे हो! क्षण भर उनके संग योग होने से ही मुक्ति है।

"अहल्या ने कहा, 'राम! शूकर-योनि में ही जन्म हो या जहाँ पर ही हो, जैसे तुम्हारे पादपद्मों में मन रहे, जैसे शुद्धाभक्ति हो जाए!'

"नारद ने कहा, राम! तुम्हारे पास से और कोई वर नहीं चाहता, मुझे शुद्धाभक्ति दो, और जैसे तुम्हारी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न होऊँ— यही आशीर्वाद करो। उनके निकट आन्तरिक प्रार्थना करने पर, उनमें मन हो जाता है— ईश्वर के पादपद्मों में शुद्धाभक्ति हो जाती है।"

(पाप और परलोक— मृत्युकाल में ईश्वर-चिन्तन— भरत राजा)

" 'हमारा क्या विकार जाएगा!' 'हमारा फिर क्या होगा!' 'हम पापी!'— ऐसी बुद्धि का त्याग करो। *(नन्दबसु के प्रति)* और यही चाहता हूँ— 'एक बार राम कहा है, मुझे भी फिर पाप'!"

नन्दबसु— परलोक है क्या? और पाप का दण्ड?

श्रीरामकृष्ण— तुम आम खाओ ना! तुम्हें इतने सब हिसाब का प्रयोजन क्या? 'परलोक है कि नहीं'— इससे क्या होता है— ऐसी बातों से?

''आम खाओ। 'आम' का प्रयोजन है— उनमें भक्ति का—''

नन्दबसु— आम्रवृक्ष कहाँ है? आम कहाँ से पाऊँ?

श्रीरामकृष्ण— वृक्ष? वे अनादि, अनन्त ब्रह्म! वे हैं ही, वे नित्य! किन्तु एक बात है— वे हैं 'कल्पतरु'!

''काली कल्पतरु मूले रे मन, चारि फल कुड़ाए पाबि!*

''कल्पतरु के पास जाकर प्रार्थना करनी चाहिए, तभी फल मिलता है, तभी फल वृक्ष के मूल में गिरता है। तब बटोर कर लाया जाता है। चारों फल— धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।

''ज्ञानीजन मुक्ति (मोक्षफल) चाहते हैं, भक्तजन भक्ति चाहते हैं— अहेतुकी भक्ति। वे धर्म, अर्थ, काम नहीं चाहते।

''परलोक की बात कहता है? गीता का मत है, मृत्युकाल में जो सोचेगा, वही होगा। भरत राजा ने 'हरिण' 'हरिण' करते-करते शोक में प्राण-त्याग किए थे। तभी उनको हरिण होकर जन्म लेना पड़ा था। इसीलिए जप, ध्यान, पूजा इत्यादि का रात-दिन अभ्यास करना चाहिए। तभी फिर मृत्यु के समय ईश्वर-चिन्तन होता है— अभ्यास के गुण से। इस प्रकार मृत्यु होने पर ईश्वर का स्वरूप पाता है।

''केशवसेन ने भी परलोक की बात पूछी थी। मैंने केशव से कहा था, 'इस समस्त हिसाब की तुम्हें क्या आवश्यकता है?' फिर और भी कहा था, 'जब तक ईश्वर-प्राप्ति नहीं हो जाती, तब तक पुनः-पुनः संसार में यातायात करना पड़ेगा। कुम्हार हण्डी, कसोरे धूप में सुखाने के लिए रखते हैं। गाय-बकरी पैरों तले यदि रौंद कर तोड़ देते हैं तो फिर पके हुए तैयार लाल हण्डी आदि फेंक देता है। किन्तु कच्चों को फिर दोबारा लेकर मिट्टी के संग मिला डालता है और फिर दोबारा चाक पर रखता है!''

---

* उस काली-कल्पतरु के नीचे तुम्हें चारों फल मिलेंगे।

तृतीय परिच्छेद

(श्रीरामकृष्ण और गृहस्थ की मंगल कामना— रजोगुण का चिह्न)

अभी तक गृहस्वामी ने ठाकुर का मिष्टमुख करने के लिए कोई चेष्टा नहीं की। ठाकुर अपने-आप उद्यत होकर गृहस्वामी से कह रहे हैं—

''कुछ खाना चाहिए। यदु की माँ से तभी तो उस दिन कहा था— 'अजि कुछ (खाने को) दो! ऐसा न हो तो गृहस्थ का पीछे अमंगल होता है!''

गृहस्वामी ने कुछ मिठाई मँगवा दी। ठाकुर खाते हैं। नन्दबसु तथा और सब ठाकुर की ओर एक दृष्टि से देख रहे हैं। देख रहे हैं— वे क्या-क्या करते हैं।

ठाकुर हाथ धोएँगे, चादर के ऊपर रकाबी (तश्तरी) में मिठाई रख दी गई थी, वहाँ पर हाथ नहीं धोएँगे। हाथ धोने के लिए एक भृत्य (नौकर) ने पीकदानी ला दी।

पीकदानी रजोगुण का चिह्न है। ठाकुर देखते ही बोल उठे, ''ले जाओ, ले जाओ।'' गृहस्वामी कहते हैं, ''हाथ धोएँ।''

ठाकुर हैं अन्यमनस्क। बोले, ''क्या?— हाथ धोऊँगा?''

ठाकुर उठकर दक्षिण के बरामदे की ओर गए। मणि को आज्ञा की, ''मेरे हाथ पर जल दो।'' मणि ने भृंगार से जल डाल दिया। ठाकुर अपने कपड़े से हाथ पोंछकर फिर दोबारा बैठने के स्थान पर लौट आए। सज्जनों के लिए रकाबी में पान लाए गए थे। उसी रकाबी का पान ठाकुर के निकट ले जाया जाने पर उन्होंने पान नहीं लिया।

(इष्टदेवता को निवेदन— ज्ञानभक्ति और शुद्धाभक्ति)

नन्दबसु *(श्रीरामकृष्ण के प्रति)*— एक बात कहूँ?

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— क्या?

नन्दबसु— पान क्यों नहीं खाया? सब ठीक हुआ है, बस वही एक अन्याय (दोष, गलत) हुआ।

श्रीरामकृष्ण— इष्ट को देकर खाता हूँ, यही एक भाव है।

नन्दबसु— वह तो इष्ट में ही पड़ता।

श्रीरामकृष्ण— ज्ञानपथ एक है; और भक्तिपथ एक है। ज्ञानी के मत में सब वस्तुएँ ही ब्रह्म-ज्ञान से ली जाती हैं। भक्ति-पथ में थोड़ी-सी भेदबुद्धि होती है।

नन्द— वही तो दोष हुआ है।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— वह मेरा एक विशेष भाव है। तुम जो कहते हो, वह भी ठीक है— वह भी है।

ठाकुर गृहस्वामी को मुसाहिबों (चाटुकारों) से सावधान कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण— और एक विशेष सावधानी! मुसाहिबगण (दरबारीगण) स्वार्थ के लिए घूमते हैं। *(प्रसन्न के पिता से)* आप क्या यहाँ पर ही रहते हैं?

प्रसन्न के पिता— जी नहीं, इसी मुहल्ले में रहता हूँ। तम्बाकू पीने की इच्छा है?

श्रीरामकृष्ण *(अति विनीत भाव में)*— नहीं रहने दो, आप पिएँ। मेरी अब इच्छा नहीं है।

नन्दबसु की बाड़ी बहुत बड़ी है। तभी ठाकुर कह रहे हैं— यदु की बाड़ी इतनी बड़ी नहीं है, वही उससे उस दिन कह दिया था।

नन्द— हाँ, उन्होंने जोडासांको में नूतन बाड़ी बनाई है।

ठाकुर नन्दबसु को उत्साह दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(नन्दबसु के प्रति)*— तुमने संसार में रहते हुए ईश्वर के प्रति मन रखा हुआ है। यह क्या कम बात है? जो संसार-त्यागी है वह तो ईश्वर को पुकारेगा ही। उसमें फिर क्या बहादुरी है? संसार में रहकर जो पुकारता है, वही है धन्य! वह व्यक्ति बीस मन पत्थर सरकाकर तब देखता है।

''एक ही भाव का आश्रय करके उनको पुकारना चाहिए। हनुमान की ज्ञानभक्ति, नारद की शुद्धाभक्ति।

''राम ने पूछा था, 'हनुमान! तुम मेरी किस भाव में अर्चना करते

हो?' हनुमान बोले, 'कभी देखता हूँ, तुम पूर्ण हो, मैं अंश; कभी देखता हूँ, तुम प्रभु हो मैं दास; और राम! जब तत्त्वज्ञान होता है, तब देखता हूँ— तुम ही मैं, मैं ही तुम'।

''राम ने नारद से कहा, तुम वर लो। नारद बोले— राम! यही वर दो जैसे तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धाभक्ति हो, और जैसे तुम्हारी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न होऊँ!''

अब ठाकुर उठेंगे।

श्रीरामकृष्ण *(नन्दबसु के प्रति)*— गीता में है, बहुत-से आदमी जिसे मानते और पूजते हैं, उसमें ईश्वर की विशेष शक्ति है। तुम में ईश्वर की शक्ति है।

नन्दबसु— शक्ति सभी मनुष्यों में समान है।

श्रीरामकृष्ण *(विरक्त होकर)*— बस वही तुम लोगों की एक ही बात है— सब लोगों की शक्ति क्या समान हो सकती है? विभु के रूप में वे सर्वभूतों में चाहे एक से बने हुए हैं किन्तु शक्ति विशेष है!

''विद्यासागर ने भी वही बात कही थी— 'उन्होंने क्या किसी को अधिक शक्ति, किसी को कम शक्ति दी है?' तब मैंने कहा था— यदि शक्ति भिन्न न होती तो फिर हम लोग तुम्हें देखने क्यों आते? तुम्हारे सिर पर क्या दो सींग निकल आए हैं?''

ठाकुर उठे। भक्तगण भी संग-संग उठ गए। पशुपति ने संग-संग जाकर दरवाज़े तक पहुँचा दिया।